की उपलब्धि हो गई। श्रीमद्भागवत का कथन है कि सामान्यतः धार्मिक मनुष्य भी प्रायः यह नहीं जानते कि धर्म का परम लक्ष्य भक्तियोग ही है। साधारणतया स्वरूप-साक्षात्कार के पथ को जानने के लिए वैदिक ज्ञान आवश्यक है। परन्तु नारदजी को वैदिक सिद्धान्तों की शिक्षा के बिना भी वैदिक स्वाध्याय के परम प्रयोजन की प्राप्ति हो गयी। भक्तिपथ इतना समर्थ है कि धार्मिक पद्धति का नियमित पालन किए बिना भी परम संसिद्धि हो सकती है। वेद में प्रमाण है, **आचार्यवान् पुरुषो वेद।** जिसे महान् आचार्यों का सत्संग प्राप्त है, वह पुरुष विद्या-वेद विहीन होने पर भी साक्षात्कार के लिए पर्याप्त ज्ञान प्राप्त कर सकता है।

भक्तिपथ बड़ा सुखसाध्य है। भक्तियोग का स्वरूप है: **श्रवणं कीर्तनं विष्णोः**। श्रीभगवान् का श्रवण-कीर्तन करने अथवा प्रामाणिक आचार्यों के भक्ति-ज्ञानपरक दार्शनिक प्रवचनों को सुनने मात्र से भक्ति का सम्पादन हो जाता है। सत्संग में बैठने से यह सब शिक्षा सुलभ है। फिर श्रीभगवान् के स्वादिष्ट प्रसाद का आस्वादन किया जा सकता है। इस प्रकार भक्तियोग सब अवस्थाओं में आह्लाददायी है। परम दरिद्रता की अवस्था में भी भक्तियोग का साधन हो सकता है। श्रीभगवान् की वाणी है, **पत्रं पुष्पं फलम्**: भक्त के किसी भी समर्पण को ग्रहण करने के लिए भगवान् सदा आतुर रहते हैं। पत्र, पुष्प, फल, जल, आदि पदार्थ, जो विश्व में सर्वत्र उपलब्ध हैं, किसी भी वर्ण के मनुष्य द्वारा श्रीभगवान् को अर्पण किए जा सकते हैं। भक्तिभावमय समर्पण को वे अवश्य अंगीकार करते हैं। इतिहास में इसके अगणित उदाहरण हैं। भगवच्चरणारविन्द में अर्पित तुलसी की सौरभ का आघ्राण करने मात्र से सनत्कुमार आदि महर्षि महाभागवत बन गए। इस प्रकार भक्तिमार्ग अति उत्तम भी है और सुखसाध्य भी है। श्रीमाधव तो बस भावग्राही हैं।

यहाँ भक्तियोग को शाश्वत् (नित्य) कहा गया है। इससे मायावादी दार्शनिकों का मत ध्वस्त हो जाता है। मायावादी कभी-कभी नाममात्र की भक्ति को अंगीकार कर लेते हैं और मोक्ष होने तक उसका आचरण किया करते हैं। परन्तु अन्त में भक्ति को त्यागकर वे 'भगवान् से एक हो जाते हैं'। ऐसी क्षणिक स्वार्थप्रेरित भक्ति को शुद्ध भक्तियोग नहीं कहा जा सकता। सच्चा भक्तियोग तो मोक्ष हो जाने पर भी पूर्ववत् चलता रहता है। वैकुण्ठ-जगत् में प्रविष्ट होकर भक्त वहाँ भी भगवत्सेवा के ही परायण रहता है। वह भगवान् से एक होने के लिए कभी प्रयत्न नहीं करता।

जैसा आगे वर्णन है, सच्चे भक्तियोग का आरम्भ मुक्ति के बाद होता है। इसी कारण भगवद्गीता में भक्त को 'ब्रह्मभूत' कहा है। मुक्त अथवा ब्रह्मभूत हो जाने पर ही भक्तियोग का श्रीगणेश हुआ करता है। भक्तियोग से भगवान् के तत्त्व को जाना जा सकता है। भक्ति के बिना कर्मयोग, ज्ञानयोग, अष्टांगयोग अथवा किसी अन्य योग का स्वतन्त्र साधन करने से श्रीभगवान् के तत्त्व का बोध नहीं हो सकता। भक्तियोग में संलग्न हुए बिना श्रीभगवान् का तत्त्व दुर्बोध बना रहता है।